जैन धर्म का प्राण है चरणानुयोग की सारी व्यवस्थाएँ जिसकी दासियाँ हैं।

अवसर्पिणी काल के प्रथम द्वितीय और तृतीय काल में भोगभूमि की रचना थी उस समय विवाह और वर्णव्यवस्था का पता भी न था एक ही माता पिता से उत्पन्न होने वाली पुत्र पुत्री सन्तान में दाम्पत्यसम्बन्ध होजाता था और वे आजन्म पति पत्नी बने रहते थे। भाई वहिन में पति पत्नी सम्बन्ध होने पर भी वे आर्य कहलाते थे। जैन शास्त्रों में उन के इस कार्य को निन्दा कहीं भी नहीं की गई है।

यह साधारण बात नहीं है लेकिन इसी के भीतर जैनधर्म का मर्म छिपा हुआ है इसी बात से मालूम होजाता है कि जैनधर्म समाज व्यवस्था के ऊपर कैसा प्रकाश डालता है।

बात यह है कि जैन सिद्धान्तानुसार आत्मा की अशुभ संक्लेशता ही पाप है। और जिन कार्यों से वह अशुभसंक्लेशता पैदा होती है वे भी पाप शब्द से कहे जाते हैं। भोग भूमि में ऐसी ही व्यवस्था थी और जिस व्यवस्था को समाज अपना लेती है उसके करने में विशेष संक्लेशता नहीं होती।

प्राकृतिक जलाशयों से पानी लेने पर कोई चोर नहीं कहा जाता लेकिन यदि किसी जलाशय पर राज्य की ओर से मनाही की जाती है और फिर अगर उससे कोई पानी लेता है तो दण्डित होता है। पहिली अवस्था में उसका हृदय निर्विकार है दूसरी अवस्था में उसके हृदय में भय आदि ऐसे भाव हैं जो एक चोर के हृदय में होना चाहिये। मतलब यह कि किसी काम को पाप ठहराते समय उस काम से होने वाली संक्लेशता तोली जाना चाहिये।

इस दृष्टि से भोग भूमि की, भाई बहिन को पतिपत्नी बनाने वाली व्यवस्था, बुरी नहीं कही जासकती। अस्तु

इसके बाद कर्मभूमि का प्रारम्भ हुआ, नई विवाह व्यवस्था का जन्म और जीवन संग्राम का प्रारम्भ हुआ। इन सब बातों को देखकर भगवान ऋषभदेव ने वर्णस्थापना की। जुदे जुदे वर्णों के जुदे जुदे काम बताये। यदि उस समय वर्ण व्यवस्था न की जाती तो प्रजा का जीना कठिन था। वास्तव में प्रजा के जीवन के लिये वर्ण व्यवस्था है, नकि जैन धर्म का अंग बनाने के लिये। आदि पुराण के अनुसार वर्णव्यवस्था करते समय भगवान के मन में ये विचार थे।

पूर्वापर विदेहेषु या स्थितिः समवस्थिता।
साद्य प्रवर्तनीयाऽत्र ततो जीवन्त्यमूः प्रजा॥

१६ पर्व १४३ श्लोक।

पूर्व और पश्चिम विदेह में जैसी स्थिति है वहा यहाँ पर चलाना चाहिये उसी से प्रजा जीवित रह सकती है।

इससे मालूम होता है कि वर्ण व्यवस्था जीवनोपाय है न कि मनुष्यों का अटल धर्म। यदि कोई समाज इसके बिना जीवित रह सकती है तो इसकी कोई आवश्यकता नहीं है। अस्तु

इसके बाद महाराज भरत ने ब्राह्मण वर्ण की स्थापना की और तीन वर्णों में से ब्राह्मण वर्ण बनाया गया। इससे भी सिद्ध है कि आवश्यकतानुसार वर्ण बदला जासकता या नया बनाया जासकता है।

अग्रवाल और खंडेलवाल पुराने समय के क्षत्रिय बतलाये जाते हैं। जिन की गणना अब वैश्यों में होती है।

इस प्रकार परिवर्तन करने का अधिकार समाज को तो है ही लेकिन समाज का कोई मुखिया भी ऐसा कर सकता है महाराज भरत ही इस के दृष्टान्त हैं।

अब और आगे बढ़िये ब्राह्मणों को चारों वर्णों से कन्या लेने का अधिकार है इसी प्रकार प्रत्येक वर्ण को स्ववर्ण और निम्न वर्णों की कन्या लेने का अधिकार है इस प्रकार असवर्ण विवाह भी शास्त्र से विहित है।

हाँ! प्रतिलोम विवाह के विषय में मत भेद हैं क्यों कि इस से कन्याओं को संकोच होसकता है। लेकिन प्रतिलोम विवाह विधि के बिना अनुलोम विवाह विधि स्थिर नहीं रह सकती। क्यों कि ऐसा कोई नियम नहीं है कि नीचे वर्णों में कन्याएँ इतनी अधिक हों कि स्ववर्ण के अतिरिक्त अन्य वर्णों की पूर्ति भी कर सकें और न उच्च वर्णों में भी ऐसा नियम होसकता है कि उनमें कन्याएँ इतनी कम हों कि जिस से नीचे वर्णों की बहुत सी कन्याएँ आजाने पर भी बच न रहें। इस दुरवस्था का सामना ब्राह्मण और शूद्रों को बुरी तरह से करना पड़ा होगा क्योंकि ब्राह्मणों में कन्यायें परवर्ण में जाती न थीं और अन्य तीन वर्णों से उनमें चली आती थीं। इधर शूद्रों को दूसरे वर्ण से कन्यायें मिलती तो थीं नहीं उल्टी तीन वर्णों को देनी पड़ती थीं इसी लिये प्रतिलोम विवाह भी आवश्यक होगया। लेकिन पीछे के लोगों को यह बात पसन्द नहीं आई इस लिये इन सब झंझटों से बचने के लिये उनने असवर्ण विवाह की प्रथा ही तोड़ दी। हमारी समझ में असवर्ण विवाह प्रथा के मिटने का यही एक प्रधान कारण है न कि धर्म शास्त्रों का धमकाना, वे तो सदा से असवर्ण विवाह प्रथा को पीठ ठोकते आरहे हैं और इतिहास पुराण ने भी उनकी हाँ में हाँ मिलाई है।

अब हम वर्तमान की ओर झुकते हैं आजकल अग्रवाल खंडेलवाल परवार पद्मावतीपोरवाल आदि जातियाँ वैश्य वर्ण के अन्तर्गत मानी जाती हैं इनमें आपस में रोटी व्यवहार

तो है ही अब यदि बेटी व्यवहार भी होने लगे तो एक वर्ण में बेटी व्यवहार कहलायगा जो न्याय, और जैन शास्त्रों के अनुसार विहित ही है। जो शास्त्र, ब्राह्मण क्षत्रिय वर कन्या में विवाह सम्बन्ध का निषेध नहीं करते वे एक ही वर्ण की दो जातियों में विवाह का निषेध करेंगे ऐसा कहना दुराग्रह के सिवाय और क्या कहा जासकता है ?

हम इसकी और भी नाना तरह से परीक्षा ले सकते हैं अगर एक पद्मावतीपोरवाल, अग्रवाल कन्या से विवाह करले और समाज स्वीकारता देदे तो क्या परिणामों में इतनी अशुभ संक्लेशता होसकती है जो सजातीय विवाह की संक्लेशता से अधिक अथवा पाप शब्द से कही जा सके ? पाप पाँच भागों में विभक्त किया गया है हिंसा झूठ चोरी कुशील और परिग्रह। विजातीय विवाह इनमें से किसीपाप में शामिल नहीं होसकता। और न प्रत्यक्ष परोक्ष रीति से किसी पाप का कारण कहा जा सकता है।

इस से मालूम होता है कि विजातीय विवाह का निषेध करनेवाले, या तो धर्म की असलियत को नहीं पहिचाने हैं अथवा रूढ़ियों की गुलामी में फंसे हुए हैं या कि अपना दुराग्रह पूरा करना चाहते हैं। जो हो यह सिद्ध है कि विजातीय विवाह धर्म विरुद्ध या शास्त्रविरुद्ध नहीं कहा जासकता।

हाँ ! इस विषय में सामाजिक हानि लाभ का विचार करना आवश्यक है। विजातीय विवाह के विषय में क्या क्या शंकाएँ की जासकती हैं या की जाती हैं वे सब पाठकों के सामहने हम उपस्थित करेंगे पीछे उनकी मीमांसा होगी।

(१) जिस प्रकार घोड़ी का गधे के साथ, या गधी का घोड़े के साथ सम्बन्ध अच्छा नहीं है उसी प्रकार विजातीय वर कन्या का विवाह अच्छा नहीं है।

(२) विजातीय विवाह में जाति संकर सन्तान पैदा होगी।

(३) वृद्ध विवाह का क्षेत्र बढ़ जायगा।

(४) संगठन बिगड़ जायगा क्यों कि जातीय पंचायतों की अवहेलना होने लगेगी।

(५) जातीय प्रेम शिथिल होजायगा।

(६) नई रीतियों के चलने से और पुरानी रीतियों के मिटने से समाज में उच्छृंखलता आजावेगी सब अपने मन मन की करने लगेंगे।

(७) समाज में बहुत से लोग विजातीय विवाह के विरोधी हैं। इस रीति के चलने पर दो दल होजाँयगे।

(८) प्रत्येक जाति के रीति रिवाज जुदे जुदे हैं विजातीय विवाह में ये झगड़े की जड़ बन जाँयगे।

(९) विजातीय विवाह से प्रचलित जातियाँ मिट जावेंगी।

(१०) इसकी आवश्यकता ही क्या है?

विजातीय विवाह के विषय में यह दोष कहां तक उचित है संक्षेप में हम इसी बात को मीमांसा करेंगे।

(१) पहिले दोष से जाना जाता है कि दो जातियों को शारीरिक रचना इतनी विसदृश होती है कि उनमें पति पत्नी व्यवहार हो हीं नहीं सकता जैसे घोड़ी गधे में।

लेकिन यह बात बिल्कुल असत्य है घोड़ी गधे में जितना अन्तर है उतना अन्तर तो संसार के इस कोने के मनुष्य से उस कोने के मनुष्य में भी नहीं पाया जाता। फिर तो यह एक ही देश एक ही वर्ण, एक ही धर्म के मनुष्य हैं।

दुहाई है भरत चक्रवर्ती को जो बत्तीस हजार म्लेच्छ कन्यायें ले आये और उन्हें पत्नी बना डाला क्या विजातीय नर नारियों में इस से भी ज्यादा अन्तर होता है?

जैसे पशुओं में गाय, भैंस, घोड़ा, बकरा आदि भेद हैं वैसे मनुष्यों में नहीं हैं।

एक सिंहनी अच्छे से अच्छे खरगोश की [illegible] नहीं हो सकता किन्तु दो विजातीय व्यक्तियों के लिये [illegible] नियम नहीं बनाया जासकता। एक हृष्ट पुष्ट विदुषी अग्रवाल कन्या के लिये निर्बल और मूर्ख अग्रवाल वर अयोग्य है किन्तु सबल नीरोग और विद्वान विजातीयवर योग्य है।

जिस जाति में एक विद्वान, परिश्रमी, सच्चरित्र, सद्व्यवहार शील, नीरोग युवक होसकता है। क्या उसी जाति में मूर्खा, आलसिन, दुश्चरित्रा, उद्धत रुग्णा युवती नहीं होसकती? क्या इसके विपरीत, दूसरी जाति में वर के अनुकूल गुणों वाली युवती नहीं मिल सकती है? इसका उत्तर हां के सिवाय न नहीं हो सकता।

यदि इतने पर भी कल्पित भेद से डरना है तो भाई बहिन में या एक ही कुटुम्ब या एक ही गोत्र में विवाह करना और अच्छा होगा। यदि कहा जाय कि हम बहुत निकट भी नहीं आना चाहते न बहुत दूर जाना चाहते हैं तो यही अच्छा है कि विजातीयों को बहुत दूर न समझा जाय। हमें हृदय की इस संकुचितता को दूर कर देना चाहिये।

(२) संकरता को लोग व्यर्थ ही कोसते हैं जब हमारे यहां गोत्र संकर रंगसंकर (गोरा काला) स्वास्थ्यसंकर (रोगीनीरोग) उमर संकर (४० वर्षका वर ११ वर्ष की लड़की) गुण संकर (मूर्ख विद्वान) आदि अनेकों संकर हो जाते हैं तब इस जाति संकरता से क्या हानि है बल्कि यह संकरता अन्य संकरताओं की विनाशक होसकती है जो जीवन भर पतिपत्नी में प्रेम नहीं होने देतीं

गार्हस्थ्य जीवन को नारकीय जीवन बना देती हैं। कहा जासकता है कि "सजातीय माता पिता की सन्तान जितनी माता पिता के अनुरूप होगी उतनी विजातीय माता पिता की सन्तान नहीं होसकती"

हमारा निवेदन है कि योग्य माता पिता की सन्तान योग्य होगी चाहे वे माता पिता सजातीयहों या विजातीय, और अयोग्य माता पिता की सन्तान बुरी होगी चाहे वे सजातीय हों या विजातीय।

अनुरूपता का यही मतलब है कि माता पिता का जैसा स्वभाव या सौन्दर्य हो उसी प्रकार सन्तान का भी हो। क्या कोई ऐसा स्वभाव या सौन्दर्य है जिस के रखने का किसी जाति ने ठेका लेलिया हो? यदि नही! तो हमें पति पत्नी का स्वभाव आदि एक सा ढूड़ना चाहिये चाहे वह अपनी जाती में मिले या दूसरी जाति में।

स्वभाव ही नहीं विद्या कला आदिभी ठेके पर नहीं बिकी हैं बल्कि एकसा स्वभाव और विद्या कलादिका सादृश्य ढूंढने के लिये जितना विस्तृत क्षेत्रहो उतना ही अच्छा है।

(३) विजातीय विवाह से वृद्धविवाह का क्षेत्र बढ़ जाने पर भी कोई हानि न होगी क्यों कि क्षेत्र के साथ बूढ़ों की संख्या भी बढ़ जावेगी औसत करीब करीब बराबर ही आजावेगी

(४) संगठन बिगड़ तो न जायगा बल्कि सुधर जायगा। आज जिस गाँव में दस घर परवारों के, तीन घर गोलापूर्वों के, और दो घर गोलालारों के हैं। वहां तीनों अपनी जुदी जुदी खिचड़ी पकाते हैं एक जाति के मामलों में दूसरी नहीं बोलती। बहुधा ऐसा देखा जाता है कि

बलवती जाति, निर्बल जाति को दबाने लगती है जब परस्पर घनिष्ट सम्बन्ध होजायगा उस समय ये हरकतें न होसकेंगी संगठन में सुविधा होगी फूट का मुंह काला होगा।

(५) जातीय प्रेम शिथिल तो न होगा लेकिन प्रेम का क्षेत्र बढ़ जायगा हमारी आँखें खुल जावेंगी हम विश्वमैत्री का पाठ जरा और सीख जावेंगे। आज जिन्हें विजातीय कह कर अनात्मीयता प्रगट करते हैं कल ऐसा न करेंगे। जिसे हम जातीय प्रेम समझते हैं वह कारागार में पड़ा हुआ कैदी प्रेम है। इस तरह प्रेम को कैदी बना कर हम अपनी क्षुद्रता का परिचय देते हैं। विजातीय विवाह इस तरह की क्षुद्रता और पक्षपात का नाशक होगा।

(६) उच्छृंखलता का दोषारोपण भी ठीक नहीं है। उच्छृंखलता तो तब आसकती है जब समाज के हाथ में नियन्त्रण शक्ति न रहे विजातीय विवाह से और पंचायतों की नियन्त्रण शक्ति के अभाव से कुछ सम्बन्ध नहीं है। हां अगर समाज रूढ़ियों की गुलामी न छोड़ेगी तो उस के कुछ व्यक्ति उसके बुरे नियमों का भंग कर सकते हैं। अच्छा सुधारक दल सत्यग्रह करके समाज को अपनी ओर खींचने की कोशिश करेगा और योग्य सुधार करा लेगा लेकिन कुछ लोग उच्छृंखल भी होसकते हैं जो अनुचित बन्धनों के साथ उचित बन्धनों को भी तोड़ डालेंगे और इस प्रकार समाज अपनी मूर्खता से अपने पैरों पर आपही कुल्हाड़ी मार लेगी। कहना न होगा कि ये बातें सजातीय विवाह की कुटेक को लक्ष्य करके लिखी गई हैं।

(७) अगर ऐसी फूट से भय किया तो कोई कुरीति हटाई नहीं जासकती और न कोई सुरीति चलाई जासकती है।

अगर इस फूट के डर से हम सत्पथ का अवलम्बन नहीं कर सकते और पुरानी चाल पर चलते रहते हैं तो यह एक प्रकार की आत्महत्या है।

हम ऐसी फूट से कब तक डरेंगे वृद्ध विवाह का निषेध करते से बुड्ढे कुढ़ते हैं. मन्दिर का हिसाब माँगने से श्रीमानों की आँखें लाल होती हैं अब यातो उन्हें रुपये हड़पने दीजिये अथवा उनकी लाल आँखें सहिये। हम सोच सकते हैं कि सच्चा जाति हितैषी किस पथ का अलम्बन करेगा असली बात तो यह है कि प्रत्येक नवीनता को विरोध के बीच में से निकलना पड़ता है ऐसे विरोधों के डर से सत्य और स्वातन्त्र्य आजन्म काले पानी का दण्ड नहीं सह सकते।

(८) रीति रिवाज तो एक ग्राम से दूसरे ग्राम में एक प्रान्त से दूसरे प्रान्त में एक घर से दूसरे घर में समान जातियों में भी जुदे जुदे पाये जाते हैं। लेकिन उनसे विवाह कार्यों में कोई अड़चन नहीं होती ऐसा भी देखा गया है कि लड़की वाले के रीति रिवाज लड़के वाला स्वीकार कर लेता है क्योंकि लड़की वाले के यहाँ ही लड़के वाले को विवाह करना पड़ता है। उसके अतिरिक्त एक बात यह भी है कि विवाह, धार्मिक पद्धति से होना चाहिये दिगम्बर जैनियों का धर्म एक है इस लिये उनकी विवाह क्रियायें भी एकसी होनी चाहिये विजातीय विवाह से धार्मिक क्रियाओं को और अधिक उत्तेजना मिल जायगी।

(९) जातियों के नष्ट होजाने से हमारी कुछ हानि नहीं है इन जातियों का नष्ट होना मानों फूट का नष्ट होना है यदि

हमें यह फूट प्राणों में से भी प्यारी है तो वह टूट भी नहीं सकती। जैसे पति का गोत्र ही पत्नी का गोत्र कहलाने लगता है उसी तरह पति की जाति भी पत्नी की जाति कहलाने लगेगी पहिले समय में असवर्ण विवाह होने पर भी जब वर्ण नष्ट नहीं हुये तब आज विजातीय विवाह होने पर जातियाँ क्यों नष्ट होंगी ?

०) विजातीय विवाह की पूरी आवश्यकता है हम इसके कुछ लाभ दिखलाने की चेष्टा करते हैं।

१) जो समाज, सुव्यवस्था के साथ ही साथ जितना ही अधिक व्यक्तिगत स्वातन्त्र्य दे सकती है वह उतनी ही उन्नत कहलाती है विजातीय विवाह से सुव्यवस्था में तो कोई अन्तर पड़ नहीं सकता हाँ! व्यक्तियों को स्वातन्त्र्य लाभ होसकता है जोकि एक समुन्नत समाज के लक्षण है।

२) विवाह क्षेत्र छोटा होने से योग्य वर कन्या का सम्बन्ध नहीं होपाता, ज्ञान स्वभाव धन शक्ति शरीर उमर आदि अनेक बातों में अनमेल होजाता है विवाह क्षेत्र बढ़जाने से इस अनमेल को हटाने में बड़ी सुविधा होजावेगी।

३) जिन जातियों की संख्या थोड़ी है उनमें अनमेल विवाहों की संख्या अधिक है। इससे खराब सन्तान पैदा होती हैं दाम्पत्य प्रेम भी नष्ट होता है बहुतों का विवाह भी नहीं होने पाता धीरे धीरे उनकी संख्या घट रही है बहुत सी तो नाम शेष होगई हैं जो हैं वेभी कुछ दिनों में नाम शेष होने वाली हैं। लमेंचू आदि जातियों में विवाह समस्या बड़ी जटिल होरही है विजातीय विवाह से यह समस्या हल होजावेगी।

) संसार में चिरकाल जीने के लिये अन्य शक्तियों के साथ संघ शक्ति की बड़ी आवश्यकता है अबतक सामाजिक

भेदभाव हानि का कारण ही सिद्ध हुआ है इसी भेद भाव से गोरे कालों को हड़पना चाहते हैं हिन्दू मुसलमान लड़ रहे हैं दिगम्बर श्वेताम्बर लाखों रुपया माँस भक्षियों को खिला रहे हैं जातीय क्षेत्र में भी तू तू मैं मैं मची हुई है यदि एक संस्था में दो जाति के कर्मचारी होते हैं तो उनमें दलबन्दी होजाती है और वे अपनी कर्त्तव्य शीलता का गला घोंटकर परस्पर विघात में तत्पर हो जाते हैं। विजातीय विवाह से कुछ दिनों में यह भेद भाव निर्मूल हो सकता है।

(छ) जो लोग घर से बाहर निकल कर अपनी उन्नति कर सकते हैं उनको विवाह सम्बन्धी झंझटें न झेलना पड़ेंगी। आज बम्बई कलकत्ता में दस दस बीस बीस वर्ष रहकर भी वहाँ का नागरिक बनना कठिन है। क्यों कि यदि वहीं के निवासी बन जाँय तो उतनी दूर सम्बन्ध करने पर कौन राजी होसकता है यदि किसी एकाध का सम्बन्ध हो भी गया तो औरों के लिये यह व्यवस्था नहीं होसकती और जिसका सम्बन्ध हो भी होगया वह भी नातेदारी के अन्य लाभों से वञ्चित रहेगा विजातीय विवाह से ये झंझटें दूर हो जावेंगी हमको दूसरी जगह विदेशी की भाँति न रहना पड़ेगा।

(ज) वैश्यों में एक असाठी जाति है एकवार एक योग्य विद्वान के उपदेश से कुछ असाठी, जैन होगये यह सुनते ही जाति वालों ने उन्हें बहिष्कृत कर दिया वे लोग परवारों के पास आये और कहा कि अब हम अपनी लड़कियाँ किसे दें परवार चुप रह गये और वे अपने धर्म में वापिस चले गये कोई पण्डित जी महाशय कह सकते हैं कि "उनके हृदय में जैनधर्म की पक्की श्रद्धा नहीं थी अगर होती तो वे

सहस्र बाधाओं के रहते भी वापिस न जाते" हम उनकी इस दलील को मानते हैं कि निस्सन्देह उन्हें इतना पक्का श्रद्धान न हुआ था कि वे बाधाओं को झेलने के लिये तैयार हो जाते लेकिन क्या हम यह आशा करते हैं कि एक ही दिन में उन्हें यह श्रद्धान होजाता इतना पक्का श्रद्धान तो उन्हें नहीं है जो सैंकड़ों पीढ़ियों से जैन धर्म का पालन करते आ रहे हैं फिर भला उनसे क्या आशा की जासकती थी।

हर एक मनुष्य सामाजिक सुविधा देखता है अगर वह उदार होगा तो सुविधा न देखेगा लेकिन असुविधाओं के झेलने को कभी तैयार न होगा ऐसे कितने आदमी हैं जो पूज्य पं० गणेशप्रसाद जी और श्री दिग्विजयसिंह जी के समान घर द्वार छोड़ कर आजन्म ब्रह्मचारी रहकर जैन धर्म का अवलोकन करसकें। वह भी ऐसे समय में जबकी ईसाई और मुसलमान आदि सामाजिक सुविधाओं की थैलियाँ लुटारहे हैं इतनाही नहीं उनकी शिक्षा आजीविका आदि का प्रबन्ध कर देते हैं। ऐसे हजारों लोग हैं जो कि किसी विपत्ति से पीड़ित होकर या प्रलोभन में फँस कर ईसाई हुए थे लेकिन आज वे ही उस धर्म को प्राणोपम समझते हैं। यदि जैन समाज ऐसी सुविधाओं को देना तो दूर रहे लेकिन मार्ग में आई हुई असुविधाओं को हटाने के लिये तैयार नहीं है तो उसके जैन धर्म को विश्वधर्म कहलाने का साहस न करना चाहिये और किसी कोने में पड़कर मौतकी बाट जोहते हुए जीवन के इने गिने दिन पूरे करना चाहिये।

हमारी इन बातों पर यह आक्षेप किया जासकता है कि यदि ऐसा है तो जैनाजैन, हिन्दू मुसलमान, भारतीय

योरोपियन की शादी बहुत अच्छी कहलायगी है क्योंकि इससे आपकी सुविधाएँ और बढ़ जाँयगो।

हम इस अन्तर्जातीय विवाह पद्धति को जैनधर्म के विरुद्ध नहीं समझते क्योंकि बत्तीस हजार म्लेच्छ कन्यायें एक चक्रवर्ती ही ले आये थे और उन्हें पत्नी बनाया था फिर भी वर्तमान समय में यह पद्धति उपयुक्त नहीं कही जासकती। क्योंकि भारत, धर्मप्रधान देश है हम अपने धर्म को प्राणोपम समझते हैं और बात करते समय धर्म को प्राणों से भी कीमती बताते हैं इसलिये अन्य विधर्मियों के साथ वैवाहिक सम्बन्ध स्थापित करना असम्भव है अभी संसार में धार्मिक सहिष्णुता की बहुत कमी है और हमारे आचार विचार भी दूसरे धर्म वालों से बहुत भिन्न हैं हम यह भी आशा नहीं कर सकते कि हमारे यहाँ की लड़कियाँ अपने धर्म बल से पति को और उस घर के अन्य व्यक्तियों को अपने धर्म में दीक्षित कर सकेंगी बल्कि इससे उलटा होते ही देखा गया है दूसरे धर्म की लडकियों को घर लाकर भी हम अपने धर्म में मिलाते समय असफल होते देखे गये हैं। दूर जाने की जरूरत नहीं है अग्रवालों का दृष्टान्त हमारे सामने है।

यदि पति जैन है और पत्नी अजैन, तो हर एक काम में अड़चन उपस्थित होती है पत्नी चाहती है कि मैं सराग देवों की पूजा करूं रात्रि में रसोई चढ़ाऊँ पर्युषण और आष्टाह्निका में भी अभक्ष्य भक्षण करूं दिन भर उपवास करके रात्रि में भर पेट खाऊँ इत्यादि बातें पति को असह्य है। इसलिये दोनों में अनबन हो जाती है दाम्पत्य प्रेम शिथिल और विकृत हो जाता है।

यदि पति अजैन है और पत्नी जैन तो और भी खराबी होती है घर वाले शाम को खाने नहीं देते इसलिये विवश होकर

रात्रि को खाना पड़ता है सराग देवों को पूजना पड़ता है जिन मन्दिर के दर्शन करना कभी नसीब नहीं होता तात्पर्य यह कि पति पत्नी के धर्म जुदे जुदे होने से बड़ी झंझटें खड़ी होती हैं इसलिये दिगम्बर जैनियों में विजातीय विवाह होना चाहिये इससे हम उन हानियों से बचे रहेंगे जो कि अग्रवालों को उठानी पड़ती हैं।

अग्रवालों की दशा देखकर कहना पड़ता है कि समाज रूढ़ियों के आगे न्याय को कुछ नहीं समझती। अन्यथा जैन और अजैन में विवाह होने पर चूं न करने वाली समाज, परस्पर जैन जातियों के विवाह सम्बन्ध को बुरा कहने का दुःसाहस कभी न करती।

यहां तक हम ने विजातीय विवाह पर तर्क वितर्क किया है फिर भी हम इसे एक प्रकार से निरर्थक ही समझते हैं। क्यों कि रूढ़ियाँ, तर्क और आगम का सहारा लेकर नहीं चलतीं जो होता आरहा है वह होगा अगर युक्ति आगम उसके अनुकूल है तो ठीक है नहीं तो उन्हें रूढ़ि के आगे चुप रहना पड़ेगा अंधा और इधी लोकाचार आंख मीच कर ही दौड़ता है।

लेकिन कालचक्र सदा बदलता रहता है जहां आज ठंड है कल वहीं गर्मी है जहां अभी छाया है थोड़ी देर बाद वहीं धूप है इस लिये परिस्थिति के अनुकूल कार्य करने की सदा आवश्यकता होती है।

रोगी के समान समाज, क्रान्ति रूपी औषधि से डरती है लेकिन ऐसी ही हालत में उसी समाज से ऐसे वीर पैदा होते हैं जो सत्क्रांति का बीड़ा उठाते हैं पहिले तो समाज चिल्लाती है लेकिन कुछ समय बाद क्रान्ति में ही भला समझ कर चुप चाप उन्हीं वीरों का अनुकरण करने लगती है।

इस समय जब कि समाज का बड़ाभाग विजातीय विवाह सरीखी लाभ दायक प्रथा से डरता है कुछ साहसी व्यक्तियों को आगे आना चाहिये। समाज के सामने अपना मत युक्त्या गम अनुकूल बताकर रख दिया समाज के अगुओं ने गालियाँ सुनादीं। बस! इस तरह वाद विवाद का समय पूरा होचुका है अब कार्य का समय आगया है। जो लोग विजातीय विवाह को अच्छा समझते हैं वे यथा साध्य विजातीय विवाह करें, करावें और ऐसे विवाहों में सम्मिलित होवें।

समाज उनका बहिष्कार करेगी लेकिन यही उनकी विजय है क्योंकि विरोध बिना कोई आन्दोलन नहीं फलता फूलता। बहिष्कार के पहिले वे कोरे बकवादी कहलाते थे अब काम करने वाले कहलाँयगे। हाँ! इस बात का ख्याल रहे कि समाज में अराजकता न फैलने पावे। हम इस विषय में पूज्यपाद म० गाँधी जी का मत बतलाते हैं उस से पाठकों को अच्छी तरह मालूम हो जायगा कि इस विषय में हमें क्या करना चाहिये।

"जाति भोज की रोक करने से भी शायद अधिक ज़रूरी सवाल है भिन्न भिन्न जातियों में रोटी बेटी व्यवहार को उत्तेज़ना देने का। वर्णाश्रम आवश्यक है परन्तु अनेक उपजातियाँ हानिकारक हैं जहाँ रोटी व्यवहार है, वहाँ बेटी व्यवहार के सम्बन्ध में दो मत न होंगे। यह भी देखते हैं कि ऐसे विवाह ठीक तादाद में हो भी चुके हैं। अब इस सुधार को नहीं रोक सकते। अत एव यह बहुत आवश्यक है कि समझदार मुखिया ऐसे विचार को उत्तेजना दें। समय की रुचि के प्रतिकूल यदि मुखिया लोग ज्यादा सख्ती करेंगे तो उनका मान भंग होने की सम्भावना है। सुधारकों के लिये शोचनीय बात यह

है कि यदि उन्हें ऐसा सुधार मुखियों के खिलाफ़ होकर करना पड़े तो विनय से काम लें। ऐसे सुधारक भी देखे जाते हैं जो मुखियों को तुच्छ मान कर उन्हें चुनौती देते हैं कि तुम से जो होसके सो करलो। ऐसी जहालत करने से सुधार रुकता है। और यदि मुखिया बिल्कुल निर्बल होगया हो और इस लिये दण्ड देने से अशक्त हो गया तो सुधारक एक तरह का स्वेच्छाचारी होजाता है। स्वेच्छाचार सुधार नहीं है। उस से समाज ऊँचा नहीं उठता नीचे गिरता है"।

यह कहने की जरूरत नहीं कि इस पथसे सुधारकों को अच्छी सफलता मिलसकती है न्याय की अग्नि चिरकाल तक ईंधन से रुकी नहीं रह सकती। आजजो सुधारकों के विरोधी हैं कल वे ही हृदय से हृदय मिलाने आयेंगे। साधारण समाजों में भी ऐसे लोगों की कमी नहीं है जो उस दिन की बाट देखरहे हैं जिस दिन आप झंडा लेकर खड़े होंगे वे उसी समय चुपचाप झंडे के नीचे आजाँयगे।

अगर इसकार्य के लिये कार्य शीला समिति बनाई जाय जो एक विधायक कार्य क्रम रख कर आगे बढ़े, तो सफलता शीघ्र ही, उसके साम्हने आत्मसमर्पण करदेगी।

साहित्य रत्न दरबारीलाल न्यायतीर्थ

इन्दौर।